Postal No. RJ/ ब्यावर /10067/09-011

केन्द्र सरकार व राजस्थान सरकार के विज्ञापनों हेतु मान्यता प्राप्त

तीर्थाश्रम वनारण्य गिरि पर्वत सागर: । भारती सरस्वती चैव पुरी नामानि वै दश: ।

दशनाम प्रकाश

दशनाम गोस्वामी समाज का पूर्ण एवं एकमात्र पत्र

वर्ष 15 · अंक 7 · 10 जुलाई 2009 · पाक्षिक

आजीवन शुल्क रू. 1000.00 · वार्षिक शुल्क रू. 100.00

सहयोग शुल्क रू. 200.00 · एक प्रति रू. 4.00

सम्पादक-गोस्वामी चौसूलाल भारती भवानीखेड़ा-305401 अजमेर

आर.एन.आई. नं. 67184/93

सभी प्रसंगों का न्याय क्षेत्र अजमेर होगा।

दूरभाष 01491-288235, मोबाईल - 9214865693

समाज के नाम पर नेतागीरी करने के शौकीन

सम्पादकीय

पचास साठ वर्ष से दशनाम गोस्वामी समाज के हितार्थ जिले से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक नेतागीरी करने के शौकीन लोगों द्वारा गठित कागजी संगठनों का उदय और अस्त देखते आ रहा हूँ किन्तु परिणाम शून्य रहा है। आज इस समाज में जो कुछ प्रगति दिखाई दे रही है इसमें इन तथाकथित संगठनों का कोई योगदान नहीं है बल्कि उन महापुरुषों के व्यक्तिगत प्रयास है। जो लोग समाज सुधार का आडम्बर करते हुए नित नये नये संगठनों का निर्माण कर रहे हैं वे समाज के अन्तिम व्यक्ति तक पहुंचकर उसकी पीड़ा का तो क्या अनुभव कर सकते हैं बल्कि उसकी आड़ में अपनी नेतागीरी चमकाने को अपने कर्तव्य की इतिश्री मान बैठे हैं। ना तो उनका इस समाज से और ना ही समाज का उनसे कोई सरोकार है बल्कि दोनों की दशा और दिशा विपरीत ध्रुवों पर टिकी हुई है। इस समाज की उन्नति के लिए कहां और कब किस संगठन का निर्माण हुआ, कौन कौन पदाधिकारी बनाये गये? मनोनीत किये गये अथवा स्वयं ही माला पहन अपनी पीठ थपथपा ली? कब विसर्जन और पुनरुस्थान होकर किन-किन को धकेल कर कौन कौन नये मनोनीत अथवा स्वयंभु अध्यक्ष व पदाधिकारी पैदा हो गये व उनकी भी भ्रूण हत्या होकर तत्काल गर्भ से अन्य निकल आया। नेतागीरी के शौकीन ऐसे ही लोगों में से कुछ छपास के रोगी अन्य अथवा स्वयं के अखबार निकालकर उसमें छपते रहने को ही सफलता की कुंजी मान रहे हैं, समाज से उनका कोई लेना-देना नहीं बल्कि उनके नाम से अपना शौक पूरा कर रहे हैं। दशनाम गोस्वामी समाज ऐसे लोगों से कोई सार्थक अपेक्षा नहीं बल्कि उनकी उपेक्षा कर व्यक्तिगत तौर पर लक्ष्य प्राप्ति के लिए उपायों में दत्तचित्त है। व्यक्तिगत प्रयासों से इस समाज के व्यक्ति सतह से शिखर की ओर अग्रसर हैं, इन कागजी संगठनों और छपास के रोगी स्वयंभु नेतागीरों से अपेक्षा करना तो गधे के सिर पर सींग उगाने के समान है। आम दशनाम गोस्वामी समाज नेतृत्व हीन होकर सभी क्षेत्रों में पिछड़ रहा है। कागजी और अस्तित्वहीन कथित राष्ट्रीय संगठनों और उनके स्वयंभु अध्यक्षों द्वारा प्रादेशिक व जिलास्तर तक मनमर्जी नित नये नये अध्यक्षों को मनोनीत करके समाज के नाम पर नेतागीरी का शौक पूरा करने की मानसिकता के बजाय समाज के प्रति आत्मीयता पूर्ण जुड़ाव और त्याग की उत्कट अभिलाषा से समाज में संगठन और उनके संचालकों के लिए विश्वास पैदा होने पर ही इस समाज की पहचान सहित सर्वांगीण उन्नति के द्वार स्वत: खुल सकते हैं। संगठन के कर्ता धर्ता अपना नेजागीरी का शौक पूरा करने की सभी प्रकार की बीमारियों को तिलांजलि देकर जागे जहां से सवेरा मानकर निष्ठा पूर्वक समाज का विश्वास अर्जित कर तन-मन-धन से दशनाम गोस्वामी समाज की सेवा में जुट सकें तभी उनका जीवन सार्थक और दशनाम गोस्वामी समाज को उनका सम्बल प्राप्त होगा।

विचारणीय

हम कौन थे, क्या हो गये और क्या
होंगे अभी।
आओ सब मिलकर विचारे यह
समस्या सभी॥

दो मार्ग: निवृत्ति और प्रवृत्ति

लेखक-स्वामी श्री महेश्वरानन्दजी, अधिष्ठाता विश्वदीप गुरुकुल आश्रम, जाडन, जिला पाली (राज)

योग दर्शन

गतांक से आगे

हमारे जीवन में दो प्रमुख मार्ग हैं-निवृत्ति और प्रवृत्ति। हममें से प्रत्येक व्यक्ति को अपने लिए इनमें से एक मार्ग चुनना और खोजना होगा।

मनुष्य के नाते हमें समाज में नाना प्रकार के कार्य करने और दायित्व निबाहने होते हैं। सामाजिक जीवन में अराजकता को रोकने के लिए नाना प्रकार के विधि-निषेध लागू किए गए हैं।

प्रवृत्ति का अर्थ है जगत में अपने कर्तव्यों का पालन करना, जैसे-बच्चों का लालन-पालन, उनकी शिक्षा, उनका मार्गदर्शन और उन्हें समर्थ, स्वावलम्बी तथा उत्तरदायी नागरिकों के रूप में तैयार करना। मानव-परिवार के सदस्यों के नाते हमें दूसरों को समझना और उनको सहारा देना चाहिए। समाज अनेक कार्य करने होते हैं। तथापि, हर बात की एक सीमा है। ईश्वर ने हमारे उपयोग के लिए हमें सब कुछ दिया है-हाथ, पांव, नेत्र, कान इत्यादि, जिससे कि हम अपने कर्तव्यों का पालन कर सकें, लेकिन हमें सदा के लिए प्रवृत्ति में ही नहीं रम जाना चाहिए।

जीवन के दैनिक सामान्य क्रियाकलाप में मन किसी न किसी चीज में उलझा रहता है और हमारे विचार निरन्तर बदलते रहते हैं। जब वर्षों तक काम करने और दूसरों की सेवा के बाद हम निवृत्त होते हैं तब हमारे लिए स्वयं को शांत करने का समय आता है। लेकिन यदि उस समय भी हम अपने आपको बाह्य कर्मों में व्यस्त रखें और अपने लिए समय ही न निकालें तब यह मानना होगा कि हम अभी तक भीतर से संतुष्ट नहीं हुए हैं तथा कुछ और अधिक कर्म करना चाहते हैं।

हम कोई भी मार्ग अपनाएं अंत में हम वहीं पहुंचेगें जहां वह मार्ग पहुंचता है। यदि हम जगल की ओर जाने वाला मार्ग पकड़ते हैं तो हम जंगल में पहुंच जाएंगें, और यदि रेगिस्तान की ओर जाने वाला मार्ग पकड़ेंगे तो वहां पहुंच जाएंगे। अत: जब हम एक के बाद दूसरी गतिविधि में उलझे। एक के बाद दूसरा घर बनाते हैं, एक के बाद दूसरी कार खरीदते हैं, अधिक से अधिक वस्तुओं का संग्रह करने जाते हैं, अपने बच्चों और उनके भी वयस्क बच्चों के जीवन में हस्तक्षेप करते रहते हैं तब यह समझना चाहिए कि हम अभी तक प्रवृत्ति मार्ग पर ही चल रहे हैं। मुझे एक ऐसा घर देखने का अवसर मिला है जिसमें अस्सी वर्ष की एक महिला रहती थी और चारों ओर समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं, कतरनों और कागजों का ढेर लगा हुआ था, जिन्हें उस महिला ने वर्षों में इकट्टा किया था। उसे देखकर मैं यह समझा कि जीवात्मा अभी तक संतुष्ट और तृप्त नहीं हुआ है और वह अभी तक प्रवृत्ति मार्ग पर है। राजयोग हमें यह सिखाता है कि जो जीवात्मा इस मार्ग का अनुसरण करता है वह माया में बार-बार फँसता जाता है। माया का चक्र तोड़कर उससे मुक्त होने का मार्ग निवृत्त का पथ है।

निवृत्ति कि स्थिति का अर्थ यही है कि हमने अपने कर्तव्य-कर्म पूरे कर लिए हैं तथा अब शांति और मौन साध लिया है। यों तो नियकर्म-कपड़े धोना, भोजन बनाना, घर की सफाई आदि इस अवस्था में भी करने होते हैं, लेकिन उनमें लिप्त नहीं हुआ जाता।

उदाहरण के लिए मेरी माताजी को ही को ही लें। जब मेरे भाई बहिनों में से कोई उनके पास जाकर पूछता है कि अमुख विषय में उसे क्या करना चाहिए तो वे हमेशा एक ही बात कहती है, ''मेरे बच्चे, मैंने निवृत्त मार्ग ग्रहण कर लिया है। मैं तुम्हें समझा चुकी हूँ कि हमें कैसे जीना चाहिए और क्या करना चाहिए? अब तुम स्वयं तय करो कि तुम्हें क्या करना है? मैंने जीवन भर तुम्हारी सेवा की है, यह समय मैंने अपने लिए रखा है''। वे ध्यान, स्वाध्याय और मन्त्रजाप करती रहती हैं और जब किसी को उनकी मदद की आवश्यकता होती है तो हमेशा उसके लिए तत्पर रहती है, लेकिन वे हस्तक्षेप नहीं करतीं।

कभी-कभी नियतिवश ऐसा भी होता है कि व्यक्ति बचपन से ही निवृत्ति मार्ग पर चल पड़ता है। वर्तमान पीढ़ी के युवाओं के बारे में मेरा अनुभव है कि उनमें बहुत से निवृत्ति-मार्गी हैं, और वे पुरानी पीढ़ी के लोगों की तरह संग्रह में लिप्त नहीं हैं।

निवृत्ति केवल बाह्य नहीं भीतरी भी होती है। हमारे अन्त:-करण (मन, बुद्धि, चित्त और अंहकार) वासनाओं से भरे रहते हैं। जब तक हम उनसे मुक्त नहीं होते तब तक निवृत्ति का मार्ग नहीं पकड़ सकते।

परमहंस योगीराज स्वामी महेश्वरानन्द जी महाराज
श्री दीप आश्रम सोडाला, जयपुर (राज.) फोन: 77692

प्रवृत्ति मार्ग में हमें संदेह, कष्ट, गलतफहमी, विफलता, निराशा, परिवर्तन और पीड़ा का [illegible] होता है। साथ ही परिवार बनाने, सन्तान के जन्म और पालन-पोषण तथा उनके मार्गदर्शन के लिए यह एक महत्वपूर्ण मार्ग है।

बच्चों को प्रवृत्ति मार्ग की शिक्षा नहीं दी जानी चाहिए क्योंकि वह उन्हें माया की ओर ले जाएगा। उन्हें निवृत्ति मार्ग सिखाना चाहिए जो मुक्ति की ओर ले जाता है। बच्चों को संकीर्ण मानसिकता के बजाय विस्तीर्ण क्षितिजों की ओर ले जाना बहुत महत्वपूर्ण है। आर्थिक सम्पन्नता के बावजूद संकीर्णताओं से बच्चों में लोभ, ग्रंथियां और असन्तोष पनपने लगता है। धन हमें भीतर से सम्पन्न और सन्तुष्ट नहीं कर सकता। वास्तव में वही धनी है जो संतुष्ट है, क्योंकि वही सुखी है। बच्चों को आरम्भ से ही निवृत्ति मार्ग की शिक्षा देनी चाहिए, उनका लालन-पालन इस प्रकार किया जाना चाहिए कि वे झूठ बोलने, चोरी करने, दूसरों पर निर्भर रहने अथवा ईर्ष्या जैसी बुरी आदतें न सीख पायें। इस सब का पाप-पुण्य से कोई सम्बंध नहीं है, इसका प्रयोजन उनके भीतर परिपक्व और गुण-सम्पन्न व्यक्तित्व का विकास है।

माया में अधिक लिप्त होना ठीक नहीं है। स्वयं जीवन के कर्म करते रहो, सलाह दो, सही मार्ग का संकेत करते रहो और अपने बच्चों का समुचित मार्गदर्शन करते जाओ। यदि उन्हें तुम्हारे मार्गदर्शन की आश्यकता महसूस न हो तो उन्हें उनके रास्ते जाने दो, उनकी यही नियति है।

अपना मार्ग मत भूलो। निवृत्ति-मार्ग पर आगे बढ़ो। इससे जीवात्मा को अमृतत्व प्राप्त होगा, जहां पहुंचकर उसकी जिज्ञासा शांत हो जाएगी।

ये सुन्दर बाते योग की अनेक पुस्तकों में मिल जाएंगी, लेकिन पुस्तक के द्वारा उनको समझ और सीख पाना सम्भव नहीं होता। पुस्तक प्रेरणा दे सकती है। प्रेरणा बहुत अच्छी और महत्वपूर्ण्ज चीज है लेकिन वास्तविक विद्या तो अभ्यास से ही प्राप्त की जा सकती है। देखो कहीं बहुत देर न हो जाए। वह समय भी आ सकता है जब तुम अकेले रह जाओगे।

इस बारे में एक छोटी सी कथा है। एक बार जोधपुर में जसवन्तसिंहजी नाम के एक महाराजा रहते थे। उस जमाने में भारत में बहुत से विद्वान, बुद्धिमान और योग में निपुण महाराजा हुआ करते थे। जसवन्तसिंहजी भी ऐसे ही महाराजा और योगी थे। वे प्रतिदिन घन्टों योगाभ्यास करते और अपने राजकाज को वे ध्यान में बाधा न डालने देते। वे आदर्श जीवन व्यतीत करते थे।

क्रमश: